मुनि श्रीसन्तबालजी

जनशासन और जिनशासन

'सव्वे जीव करुं शासनरसि, ऐसी भावदया मन उलसी' इस प्रसिद्ध वाक्य का अर्थ स्पष्ट है कि जब सर्वांगीण और सच्चा आत्मज्ञान प्रकट होता है तब प्राणि-मात्र को जिनका रसिक बनाने की भाव-दया अपने आप उत्पन्न हो जाती है. परन्तु जिनशासन की इमारत जनशासन के दृढ़ पाये के विना लम्बे समय टिक नहीं सकती. इसी से उत्तराध्ययन सूत्र में कहा है कि चार अंग मिलना दुर्लभ है. उनमें भी मानवता सबसे पहला अंग है. वह मूल गाथा इस प्रकार है :

चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जन्तुणो,
माणुसत्तं सुई सद्धा संजमम्मि य वीरियं।

मनुष्यत्व अथवा मानवता अर्थात् जनशासन की आधारशिला है !

भगवान् ऋषभनाथ

इस अवसर्पिणी काल में, इस क्षेत्र में सर्व प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभनाथ ने युगलिक धर्म का निवारण करके इसी कारण सुयोग्य जनशासन का बीजारोपण किया था. उन्होंने स्वयं, जब वे स्वयं क्षायिक सम्यग्दृष्टि थे तब, जनता को रोजी-रोटी के लिये खेती, पशुपालन, व्यवहार के लिये कलम और सुरक्षा के लिये शस्त्रकला सीखने की प्रेरणा की थी. भारत के इस आदि समाज के नेता ने लोगों को इतना कर्मठ एवं स्वावलम्बी बनाया कि जिससे व्यक्ति स्वातंत्र्य की रक्षा के साथ-साथ सामाजिक जीवन का आनन्द मिला करे और मानव जाति का विकास होता रहे, क्योंकि मानव जाति निर्भय और शान्त हो तो ही संसार के छोटे मोटे सभी जीव निर्भयता और शान्ति अनुभव करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकते हैं.

ऋषभयुग में मानवबुद्धि और मानवहृदय का सुसमन्वय था. भले ही कर्मठता कच्ची थी. तत्पश्चात् विविध युग, आये, कालरात्रियां भी आईं और बीत गईं. इन युगों में हृदय और बुद्धि का समन्वय हुआ, साथ ही कर्मठता का विकास हुआ और अपरंपार बौद्धिक विकास हुआ.

भगवान् महावीर

भगवान् महावीर का काल एक ओर जहां विषम था, दूसरी ओर चारित्र्य के चमत्कारों का भी था. उस युग में जनशासन के पाये को मजबूत करने के लिये जो भगीरथ पुरुषार्थ हुये उनमें से नीचे लिखी दो तीन घटनाएं उस रहस्य को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त होगीं.

[१]

रत्न-कम्बलों का एक विक्रेता निराश स्वर में गुन-गुनाता हुआ राह पर जा रहा है. वह कहता है—मगध जैसे विशाल राज्य का और राजगृही जैसी राजधानी का राजा श्रेणिक भी यदि मेरा एक रत्न-कम्बल नहीं खरीद सकता तो मेरी कला की कद्र और कहां होगी ? क्या मगध राज्य भी अब अकिंचन हो गया है ?

अटारी में खड़ी हुई भद्रा सेठानी इन उद्‌गारों को सुन कर व्यापारी को बुला कर समझाती है—'भाई, मगध राज्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का-कोषागार समाप्त नहीं हो गया है किन्तु प्रजा का धन अन्तःपुर के वैभव में व्यय नहीं किया जा सकता, मगधराज को इससे परहेज है. आपके पास जो कला है उसकी कद्र करने वाले हमारे जैसे मगध के नागरिक मौजूद हैं." इस प्रकार कह कर शालिभद्र की माताजी ने सोलह रत्न-कम्बल बीस लाख जितनी स्वर्ण-मुहर देकर पल भर में खरीद ली और दूसरे सोलह कम्बलों की मांग की. कलाकार, दांतों तले उंगली दबा कर रह गया.

× × ×

राज्य का अक्षय भंडार राजा का नहीं, राजा तो केवल प्रजा का पालक है ! बत्तीस-बत्तीस रत्न-कम्बल क्रय करने वाले धनिकों को धन का अभिमान नहीं ! उन्हें राष्ट्र का अभिमान है. कला की कद्रदानी है.

[२]

जिस शालिभद्र के पास इतना विशाल धनभंडार था, जिसके घर में देवों की समृद्धि ठिली पड़ी थी, उस शालिभद्र के पास श्रेणिक राजा स्वयं पहुंचता है. शालिभद्र की माता भद्रा का हृदय आनन्द-पुलिकित बन जाता है. सत्ता स्वयं जनता के सामने झुकने आती है, माता भद्रा विचार करती है—'राजा कैसा ही क्यों न हो आखिर प्रजा की सुरक्षा करने वाला पालक पिता सरीखा है.' शालिभद्र को उससे मिलने के लिये नीचे बुलाया जाता है. शालिभद्र भेंट तो अवश्य करता है पर उसके मन में क्या विचार उत्पन्न होता है ? 'सत्ता से सत्य महान् है. सत्य साधना की सच्ची सत्ता तो भगवान् महावीर के पास है.' और वह भगवान् महावीर के पास जाकर जैन साधुदीक्षा अंगीकार कर लेता है.

× × ×

मानवधन और देवधन की अपेक्षा साधुधन सर्वोपरि है. विशाल समृद्धि और सत्ता की अपेक्षा वात्सल्य सत्ता महान् है.

[३]

जिनशासन के एक दृढ़ स्तंभ के सदृश पुणिया श्रमणोपासक के पास न कोई सम्पत्ति है और न कोई सत्ता ही है. परिश्रम करके न्यायसम्पन्न आजीविका प्राप्त करने की परम आत्मिक सम्पत्ति ही उसके पास है. और प्राणिमात्र के साथ 'सव्वभूयप्पभूयस्स' की महान् आत्मिक सम्पत्ति का वह स्वामी है. इसी कारण राजा श्रेणिक एक बार याचक बन कर उसके आंगन में आकर याचना करता है—'पुणियाजी, आप अपनी एक सामायिक मुझे दे सकते हैं ?'

पुणिया कहता है—सामायिक आत्म-दशा है जो आपके पास ही है. प्राणि-मात्र की हृदय गुफा में वह प्रकाशित होती है. वह लेने-देने की वस्तु नहीं है.

श्रेणिक नरपति समझ गया.

× × ×

इन तीन घटनाओं से स्पष्ट ज्ञात हो जाता है कि पुणिया जैसे श्रावकों और शालिभद्र जैसे साधुओं से जिनशासन की शोभा है. भद्रामाता प्रजा और राज्य के प्रति अपना कर्तव्य पालती है पर श्रेणिक जैसा नृप समझ जाता है कि राजा की अपेक्षा प्रजा बड़ी है और प्रजा की अपेक्षा सत्य बड़ा है. इस कारण अन्ततः जिनशासन की अनुपम सेवा करके वह तीर्थंकर गोत्र उपार्जित कर लेता है.

× × ×

आज पंचम काल चल रहा है. जिनशासन की इमारत डगमगा चुकी है. क्योंकि जनशासन का पाया हिल गया है. परिणामस्वरूप दुनिया में जैसे राज्यशासन का बोलबाला है, उसी प्रकार भारत में भी बोलबाला होने लगा. तब एक धर्मवीर पुरुष आगे आया. उसका नाम था महात्मा गांधी.

उसने ब्रिटिश शासन की सर्वोच्चता को चुनौती दी. कहा—"स्वच्छंद राज्य के कानून की और सेना की सत्ता महान्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं, प्रजा के नैतिक कानून की और प्रजा की सामुदायिक चारित्र की सत्ता महान् है. आखिर ब्रिटिश शासन समाप्त हुआ. अहिंसा-शक्ति वाली प्रजा की विजय हुई.

गांधीजी गये. एक शून्यता व्याप गई.

सद्भाग्य से इसी अन्तराल में भालनलकांठा प्रयोग इसी अनुसंधान में शुरू हुआ. पुनः यह सूत्र गूंज उठा—'राज्य की अपेक्षा प्रजा महान् है. प्रजा की अपेक्षा नैतिकता महान् है ! और नैतिकता अध्यात्मलक्षी बनी रहे इसके लिये क्रान्तिप्रिय साधु साध्वियों का मार्गदर्शन अनिवार्य है.'

यद्यपि भालनलकांठा प्रदेश का विस्तार स्वल्प है. वहां (१) क्रान्ति-प्रिय साधु प्रेरणा (२) रचनात्मक कार्यकर्त्ताओं की संस्था का संचालन (३) नैतिक ग्राम संगठन (४) उसका कांग्रेस के साथ (सत्य, अहिंसा के लक्ष्य को सुरक्षित रखते हुये) अनुसंधान के साथ सफलता प्राप्त की जा चुकी है, किन्तु गहराई के साथ यदि व्यापकता पर्याप्त प्रमाण में न आवे तो सम्पूर्ण सफलता की दिशा में आगे बढ़ने के बदले पीछे हटना कहलायगा. इसी हेतु से जैसे पच्चीस वर्ष गुजरात के ग्रामों को दिये गये हैं, उसी प्रकार अन्तिम लगभग ६ वर्ष से बम्बई जैसी महानगरी के साथ और इतर प्रान्तों के साथ गाढ़ा सम्पर्क साधने के लिये मैं और साथी श्रीनेमिमुनि प्रयत्नशील हैं. इसी दृष्टि से नेमिमुनि ने मद्रास में चातुर्मास किया और लगभग आठ प्रान्तों का प्रवास किया. इसीलिए हम दोनों ने दिल्ली में चातुर्मास किया और अब कलकत्ते की ओर प्रयाण करने का निश्चय किया है.

× × ×

अब कांग्रेस का कायापलट हो रहा है. कांग्रेस राज्य की अपेक्षा, कांग्रेस का संस्था-संगठन महान् है. इतनी बात उसने विधिपूर्वक स्वीकार करने की तैयारी की है. किन्तु जब तक कांग्रेस ग्रामों, महिलाजाति और पिछड़ी हुई जातियों के वर्गों की नैतिक संस्थाओं का मार्गदर्शन स्वीकार नहीं करती तब तक सच्ची कायापलट होना अशक्य है.

ऐसी परिस्थिति में यदि क्रान्तिप्रिय-साधु साध्वी अपना आध्यात्मिक बल ऊपरी दृष्टि से नाम मात्र के लिए बनी हुई ग्रामों और शहरों की जनसंस्थाओं को अर्पित करें—गांधीयुग के रचनात्मक कार्यकर्त्ता और उपर्युक्त साधु-साध्वी के श्रद्धालु श्रावक-श्राविकाएं तथा संन्यासी भक्त जन अपना नैतिक बल संस्थारूप बन कर उन्हें प्रदान करें और जहां ऐसी संस्थाएं न हों, वहां उन्हें खड़ी करने में लग जाएं तो कांग्रेस में कायापलट होना सुशक्य है. अगर ऐसा हुआ तो भले ही ऐसे साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका विरल मिलें, परन्तु जनशासन के पाये पर निर्भर जिनशासन की इमारत सुदृढ़ बन जाएगी.

सद्गत पूज्य श्रीहजारीमलजी महाराज के संतपन को जब श्रद्धांजलि के रूप में यह स्मारक-ग्रन्थ अर्पित किया जा रहा है, तब यदि जिनशासन के पाये जनशासन का ठिकाना न हो और सत्ता के सामने जनता, जनसेवक और साधु-सन्त मस्तक झुकाते रह जाएं, तो यह अंजलि कैसे सार्थक बनेगी ? जब छठे आरे के अन्त तक, भले ही छोटा सही, चतुर्विध संघ रहना है, तब पंचम आरे में यह महत्त्वपूर्ण काम क्यों नहीं बन सकता ? अवश्य बनेगा.

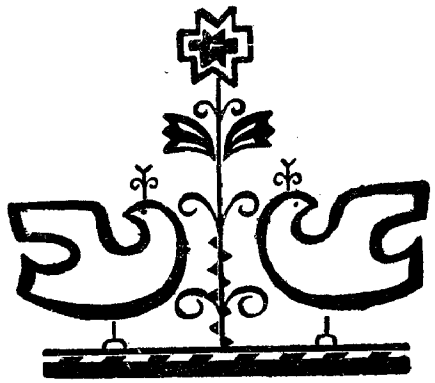

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org